

जातिवाद के संदर्भ में सशक्तिकरण : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. अमित कुमार दास

सहायक प्राध्यापक, शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, भागलपुर

Email: amitkumardas261077@gmail.com



Received 15 September 2026

Accepted 20 September 2026

Published 29 September 2026

Corresponding Author:

डॉ. अमित कुमार दास

Mail: amitkumardas261077@gmail.com

DOI: <https://doi.org/10.64880/pcjaict.v1i5.33>

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sector.

Copyright: © 2026 The Author(s).



This is an open access article under the [Creative Commons Attribution-Noncommercial 4.0 International License](https://creativecommons.org/licenses/by-nc/4.0/).

OPEN ACCESS

शोध-सार:

भारतीय समाज की संरचना ऐतिहासिक रूप से विविध सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और आर्थिक समूहों से निर्मित रही है। इस सामाजिक संरचना में जाति व्यवस्था का विशेष स्थान रहा है। जाति ने लंबे समय तक व्यक्ति की सामाजिक पहचान, पारिवारिक संबंध, विवाह, व्यवसाय, सामाजिक प्रतिष्ठा तथा संसाधनों तक पहुँच को प्रभावित किया है। जाति व्यवस्था के कुछ पारंपरिक रूपों ने सामाजिक संगठन को संरचना प्रदान की, किंतु जाति-आधारित ऊँच-नीच, अस्पृश्यता, सामाजिक बहिष्कार और अवसरों की असमानता ने समाज के अनेक वर्गों के विकास को बाधित किया।

कूटशब्द - सशक्तिकरण, सामाजिक न्याय, सामाजिक असमानता।

1. प्रस्तावना

आधुनिक भारत में संविधान ने समानता, स्वतंत्रता, सामाजिक न्याय और गरिमा को लोकतांत्रिक व्यवस्था के मूल सिद्धांतों के रूप में स्थापित किया है। संविधान का अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता को समाप्त करता है तथा सामाजिक भेदभाव के विरुद्ध कानूनी आधार प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त, शिक्षा, रोजगार और राजनीतिक प्रतिनिधित्व के क्षेत्र में विशेष प्रावधानों तथा विभिन्न कल्याणकारी कार्यक्रमों का उद्देश्य ऐतिहासिक रूप से वंचित समुदायों को अवसर उपलब्ध कराना रहा है। सामाजिक न्याय से संबंधित सरकारी नीतियों में सामाजिक सशक्तिकरण, आर्थिक सशक्तिकरण तथा सामाजिक एवं वित्तीय समावेशन को प्रमुख आयाम माना गया है। फिर भी सामाजिक समानता केवल कानूनी प्रावधानों से पूरी तरह सुनिश्चित नहीं होती। सामाजिक व्यवहार, संसाधनों का वितरण, शिक्षा की

गुणवत्ता, भूमि एवं संपत्ति तक पहुँच, रोजगार, राजनीतिक भागीदारी, सामाजिक प्रतिष्ठा तथा निर्णय लेने की क्षमता जैसे क्षेत्र आज भी सशक्तिकरण की प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। जैसे राष्ट्रीय स्तर के अध्ययनों ने जाति और सामाजिक समूहों के आधार पर शिक्षा, आय, रोजगार, भूमि, स्वास्थ्य और जीवन-

स्तर में अंतर का अध्ययन किया है। इसी संदर्भ में प्रस्तुत शोध “जातिवाद के संदर्भ में सशक्तिकरण” को केवल आर्थिक उन्नति के रूप में नहीं देखता, बल्कि इसे सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक, राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक क्षमताओं के विस्तार की व्यापक प्रक्रिया के रूप में समझने का प्रयास करता है।

2. अध्ययन की पृष्ठभूमि

भारतीय समाज में जाति की ऐतिहासिक भूमिका जटिल रही है। जाति केवल सामाजिक पहचान का साधन नहीं रही, बल्कि अनेक परिस्थितियों में इसने संसाधनों और अवसरों के वितरण को भी प्रभावित किया। विशेष रूप से अनुसूचित जातियों तथा अन्य सामाजिक रूप से वंचित समूहों को शिक्षा, भूमि, रोजगार, सार्वजनिक संसाधनों तथा सामाजिक सम्मान तक पहुँच में ऐतिहासिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

स्वतंत्रता के बाद भारतीय राज्य ने सामाजिक न्याय को विकास की प्रक्रिया का महत्वपूर्ण अंग माना। शिक्षा और रोजगार में आरक्षण, छात्रवृत्ति, आवासीय सुविधाएँ, कौशल-विकास, वित्तीय सहायता, उद्यमिता तथा राजनीतिक प्रतिनिधित्व जैसी व्यवस्थाएँ सामाजिक सशक्तिकरण की दिशा में महत्वपूर्ण साधन बनी हैं। निति आयोग के दस्तावेजों में अनुसूचित जातियों की स्थिति में सुधार के लिए शिक्षा, रोजगार, कौशल-विकास, उद्यमिता तथा सामाजिक सुरक्षा जैसे क्षेत्रों को महत्वपूर्ण माना गया है। कानूनी स्तर पर भी अस्पृश्यता और जाति-आधारित अत्याचार के विरुद्ध विशेष कानून बनाए गए हैं। Protection of Civil Rights Act, 1955 का उद्देश्य अस्पृश्यता के प्रचार और व्यवहार तथा उससे उत्पन्न नागरिक अधिकारों की बाधाओं को दंडनीय बनाना है। इसी प्रकार Scheduled Castes and Scheduled Tribes (Prevention of Atrocities) Act, 1989 का उद्देश्य अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के विरुद्ध अत्याचारों को रोकना, विशेष न्यायालयों की व्यवस्था करना तथा पीड़ितों के लिए राहत और पुनर्वास का प्रावधान करना है। इस प्रकार सशक्तिकरण को समझने के लिए केवल सरकारी योजनाओं की उपलब्धता का अध्ययन पर्याप्त नहीं है। यह देखना भी आवश्यक है कि संबंधित समुदाय इन अवसरों तक कितनी पहुँच बना पा रहे हैं, उनका उपयोग किस प्रकार कर रहे हैं और क्या इससे उनकी सामाजिक स्थिति तथा निर्णय लेने की क्षमता में परिवर्तन हो रहा है।

3. समस्या का प्रतिपादन

जाति-आधारित असमानता के विरुद्ध संवैधानिक और कानूनी प्रयासों के बावजूद सामाजिक जीवन में विभिन्न प्रकार की असमानताएँ बनी रह सकती हैं। शिक्षा में प्रवेश प्राप्त करना और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त करना समान बात नहीं है। इसी प्रकार रोजगार प्राप्त करना और स्थायी तथा सम्मानजनक रोजगार प्राप्त करना भी अलग-अलग स्थितियाँ हैं।

सशक्तिकरण की वास्तविक प्रक्रिया तब दिखाई देती है जब व्यक्ति या समुदाय:

1. अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो;
2. शिक्षा और ज्ञान तक समान पहुँच रखता हो;
3. आर्थिक संसाधनों पर नियंत्रण या पर्याप्त पहुँच प्राप्त करे;
4. निर्णय लेने की प्रक्रिया में भाग ले;
5. सामाजिक भेदभाव का प्रतिरोध करने की क्षमता विकसित करे;
6. राजनीतिक और संस्थागत प्रतिनिधित्व प्राप्त करे;
7. आत्मसम्मान तथा सामाजिक गरिमा का अनुभव करे।

अतः इस अध्ययन की मूल समस्या यह है कि जाति-आधारित सामाजिक संरचना के संदर्भ में विभिन्न प्रकार के सशक्तिकरण किस प्रकार विकसित होते हैं और शिक्षा, आर्थिक अवसर, राजनीतिक भागीदारी, कानूनी जागरूकता तथा सामाजिक संगठन इस प्रक्रिया को किस प्रकार प्रभावित करते हैं।

4. अध्ययन का महत्व

यह अध्ययन कई स्तरों पर महत्वपूर्ण है।

4.1 सामाजिक महत्व

यह अध्ययन सामाजिक असमानता और सामाजिक समावेशन के संबंध को समझने में सहायता करेगा। इससे यह स्पष्ट करने में मदद मिलेगी कि सामाजिक सशक्तिकरण केवल आर्थिक सहायता से संभव नहीं है, बल्कि सामाजिक सम्मान और समान अवसर भी आवश्यक हैं।

4.2 शैक्षिक महत्व

शिक्षा को सामाजिक गतिशीलता और सशक्तिकरण का महत्वपूर्ण साधन माना जाता है। शिक्षा व्यक्ति में अधिकार-जागरूकता, आलोचनात्मक सोच, रोजगार क्षमता तथा सामाजिक भागीदारी को बढ़ा सकती है।

4.3 आर्थिक महत्व

आर्थिक स्वतंत्रता व्यक्ति और परिवार की निर्णय लेने की क्षमता को प्रभावित करती है। रोजगार, स्वरोजगार, कौशल-विकास, उद्यमिता तथा वित्तीय समावेशन जाति-आधारित आर्थिक निर्भरता को कम करने में भूमिका निभा सकते हैं।

4.4 राजनीतिक महत्व

राजनीतिक प्रतिनिधित्व वंचित समूहों को सार्वजनिक निर्णय-निर्माण में भाग लेने का अवसर देता है। पंचायतों और स्थानीय संस्थाओं में भागीदारी स्थानीय स्तर पर नेतृत्व तथा नागरिक जागरूकता को बढ़ाने का माध्यम हो सकती है।

4.5 नीतिगत महत्व

अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष सामाजिक न्याय, शिक्षा, रोजगार, कौशल-विकास और सामाजिक सुरक्षा से संबंधित कार्यक्रमों के क्रियान्वयन को समझने में उपयोगी हो सकते हैं।

5. सशक्तिकरण की अवधारणा

“सशक्तिकरण” का अर्थ केवल शक्ति प्राप्त करना नहीं है। व्यापक अर्थ में सशक्तिकरण वह प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति या समुदाय अपनी परिस्थितियों को समझने, उपलब्ध अवसरों का उपयोग करने, निर्णय लेने और अपने अधिकारों की रक्षा करने की क्षमता विकसित करता है।

इस अध्ययन में सशक्तिकरण को निम्नलिखित आयामों में समझा जाएगा:

5.1 शैक्षिक सशक्तिकरण

शिक्षा तक पहुँच, विद्यालय/महाविद्यालय में निरंतरता, उच्च शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा, डिजिटल ज्ञान और शैक्षिक उपलब्धि।

5.2 आर्थिक सशक्तिकरण

रोजगार, आय, संपत्ति, भूमि, व्यवसाय, स्वरोजगार, बैंकिंग तथा वित्तीय संसाधनों तक पहुँच।

5.3 सामाजिक सशक्तिकरण

सामाजिक सम्मान, सार्वजनिक स्थानों तक पहुँच, सामाजिक संबंधों में समानता तथा भेदभाव का विरोध करने की क्षमता।

5.4 राजनीतिक सशक्तिकरण

मतदान, राजनीतिक जागरूकता, स्थानीय संस्थाओं में भागीदारी, नेतृत्व और निर्णय-निर्माण में सहभागिता।

5.5 कानूनी सशक्तिकरण

संवैधानिक अधिकारों, कानूनी प्रावधानों, शिकायत-निवारण व्यवस्था तथा न्यायिक संस्थाओं के प्रति जागरूकता।

5.6 मनोवैज्ञानिक सशक्तिकरण

आत्मविश्वास, आत्मसम्मान, अधिकार-बोध, भविष्य के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण और सामाजिक परिस्थितियों को बदलने की क्षमता का अनुभव।

6. जातिवाद की अवधारणा

जातिवाद से आशय उस सामाजिक सोच और व्यवहार से लिया जा सकता है जिसमें जातिगत पहचान के आधार पर किसी व्यक्ति या समूह के प्रति पक्षपात, श्रेष्ठता-बोध, भेदभाव, बहिष्कार या अवसरों में असमानता उत्पन्न होती है।

जाति और जातिवाद में अंतर करना आवश्यक है। जाति एक सामाजिक संरचना या पहचान हो सकती है, जबकि जातिवाद उस पहचान के आधार पर असमानता, भेदभाव या सामाजिक वर्चस्व को बनाए रखने वाली विचारधारा और व्यवहार से संबंधित है।

इस अध्ययन में जातिवाद का अध्ययन शिक्षा, रोजगार, सामाजिक संबंध, विवाह, सार्वजनिक संसाधनों, राजनीतिक भागीदारी तथा सामाजिक प्रतिष्ठा के संदर्भ में किया जाएगा।

7. साहित्य समीक्षा

जाति और सामाजिक असमानता पर भारतीय तथा अंतरराष्ट्रीय समाजशास्त्रीय साहित्य व्यापक है।

डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर ने जाति व्यवस्था की संरचना, सामाजिक असमानता तथा जाति-उन्मूलन की आवश्यकता पर महत्वपूर्ण वैचारिक कार्य किया। उनकी रचना Annihilation of Caste जाति व्यवस्था की आलोचना और सामाजिक समानता के प्रश्न को समझने के लिए प्रमुख स्रोत है।

एम. एन. श्रीनिवास ने भारतीय सामाजिक संरचना में “Sanskritization” और सामाजिक परिवर्तन जैसी अवधारणाओं के माध्यम से जाति और सामाजिक गतिशीलता को समझने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

G. S. Ghurye ने भारतीय जाति व्यवस्था की संरचना और विशेषताओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन किया। André Beteille ने असमानता, सामाजिक स्तरीकरण और आधुनिक भारतीय समाज में सामाजिक परिवर्तन का विश्लेषण किया।

आधुनिक अनुभवजन्य अध्ययनों में Sonalde Desai और Amaresh Dubey का कार्य विशेष उल्लेखनीय है। उन्होंने 21वीं सदी के भारत में जाति और सामाजिक-आर्थिक स्थिति के संबंध का अध्ययन किया। IHDS से संबंधित शोधों में जाति के आधार पर शिक्षा, रोजगार, आय, भूमि और जीवन-स्तर के अंतर पर ध्यान दिया गया है।

India Human Development Survey में जाति-संबंधी वर्गीकरणों के अंतर्गत अनुसूचित जाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जनजाति तथा अन्य समूहों से संबंधित जानकारी उपलब्ध है, जिससे सामाजिक-आर्थिक स्थिति और जाति के बीच संबंध का अनुभवजन्य अध्ययन किया जा सकता है।

सरकारी साहित्य में भी सामाजिक सशक्तिकरण को शिक्षा, रोजगार, आर्थिक स्वतंत्रता, सामाजिक समावेशन और कानूनी संरक्षण से जोड़ा गया है। निति आयोग के सामाजिक न्याय संबंधी दस्तावेज में सामाजिक सशक्तिकरण, आर्थिक सशक्तिकरण तथा सामाजिक एवं वित्तीय समावेशन को परस्पर जुड़े आयामों के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

इसके बावजूद स्थानीय स्तर पर जाति, शिक्षा, आर्थिक स्थिति, राजनीतिक भागीदारी और सामाजिक सशक्तिकरण के परस्पर संबंधों का क्षेत्रीय अध्ययन अभी भी महत्वपूर्ण शोध-विषय है। यही इस अध्ययन का प्रमुख शोध-अंतराल है।

8. शोध-अंतराल

पूर्ववर्ती साहित्य में जाति व्यवस्था, सामाजिक असमानता, आरक्षण, दलित अध्ययन, सामाजिक गतिशीलता और विकास के विभिन्न पहलुओं पर पर्याप्त शोध उपलब्ध है। फिर भी निम्नलिखित क्षेत्रों में आगे अध्ययन की आवश्यकता है:

1. जाति और सशक्तिकरण को एक संयुक्त बहुआयामी अवधारणा के रूप में समझना।
2. शैक्षिक उपलब्धि और वास्तविक सामाजिक सशक्तिकरण के संबंध का अध्ययन।
3. आर्थिक स्वतंत्रता और सामाजिक प्रतिष्ठा के बीच संबंध का अध्ययन।
4. राजनीतिक भागीदारी और निर्णय लेने की क्षमता के बीच संबंध।
5. कानूनी जागरूकता और सामाजिक भेदभाव के अनुभव के बीच संबंध।

6. ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में सशक्तिकरण के स्वरूपों की तुलना।
7. महिलाओं और युवाओं के सशक्तिकरण में जाति की भूमिका का अध्ययन।

9. अध्ययन के उद्देश्य

इस शोध के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

- (i) जातिवाद और सशक्तिकरण की अवधारणाओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन करना।
- (ii) जाति-आधारित सामाजिक असमानता के विभिन्न रूपों का अध्ययन करना।
- (iii) शिक्षा और सशक्तिकरण के बीच संबंध का विश्लेषण करना।
- (iv) आर्थिक स्थिति और सामाजिक सशक्तिकरण के संबंध का अध्ययन करना।
- (v) राजनीतिक भागीदारी के सशक्तिकरण पर प्रभाव का अध्ययन करना।
- (vi) कानूनी अधिकारों और सामाजिक जागरूकता की स्थिति का अध्ययन करना।
- (vii) जाति-आधारित भेदभाव के अनुभवों का अध्ययन करना।
- (viii) सामाजिक संगठनों और सामुदायिक सहभागिता की भूमिका का विश्लेषण करना।
- (ix) महिलाओं तथा युवाओं के संदर्भ में सशक्तिकरण की स्थिति का अध्ययन करना।
- (x) सामाजिक समावेशन को बढ़ाने के लिए संभावित सुझाव प्रस्तुत करना।

10. अध्ययन की संभावित सीमाएँ

1. अध्ययन का क्षेत्र सीमित होने के कारण परिणामों को पूरे भारत पर सीधे लागू नहीं किया जा सकेगा।
2. जाति एवं भेदभाव से संबंधित प्रश्नों पर कुछ उत्तरदाता सामाजिक दबाव के कारण पूरी जानकारी साझा न करें।
3. सशक्तिकरण एक बहुआयामी अवधारणा होने के कारण इसका पूर्ण मापन चुनौतीपूर्ण हो सकता है।
4. आय, शिक्षा और रोजगार के आँकड़ों में उत्तरदाताओं द्वारा दी गई जानकारी पर निर्भरता हो सकती है।
5. क्षेत्रीय और सांस्कृतिक विविधता परिणामों को प्रभावित कर सकती है।

11. अध्ययन की उपयोगिता

यह शोध सामाजिक विज्ञान, समाजशास्त्र, शिक्षा, राजनीति विज्ञान, ग्रामीण विकास और सामाजिक कार्य के विद्यार्थियों एवं शोधकर्ताओं के लिए उपयोगी हो सकता है।

शिक्षकों के लिए यह अध्ययन यह समझने में उपयोगी होगा कि शिक्षा सामाजिक असमानता को कम करने में किस प्रकार योगदान दे सकती है। नीति-निर्माताओं के लिए यह शोध सामाजिक सशक्तिकरण कार्यक्रमों के प्रभाव को समझने में सहायक हो सकता है।

सामुदायिक स्तर पर अध्ययन अधिकार-जागरूकता, शिक्षा, कौशल-विकास, सामाजिक भागीदारी और नेतृत्व विकास की आवश्यकता को रेखांकित कर सकता है।

12. संभावित सुझाव

अध्ययन के आधार पर निम्न प्रकार के सुझावों पर विचार किया जा सकता है:

1. वंचित समुदायों के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की पहुँच बढ़ाई जाए।
2. उच्च शिक्षा में आर्थिक एवं शैक्षिक सहायता को प्रभावी बनाया जाए।
3. कौशल-विकास और रोजगारपरक शिक्षा को स्थानीय आवश्यकताओं से जोड़ा जाए।
4. स्वरोजगार और उद्यमिता के लिए वित्तीय तथा तकनीकी सहायता उपलब्ध कराई जाए।
5. कानूनी अधिकारों के संबंध में जन-जागरूकता कार्यक्रम बढ़ाए जाएँ।

6. विद्यालयों और उच्च शिक्षण संस्थानों में समानता एवं सामाजिक समावेशन पर कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ।
7. स्थानीय शासन संस्थाओं में वास्तविक भागीदारी को प्रोत्साहित किया जाए।
8. महिलाओं के शिक्षा, रोजगार और नेतृत्व संबंधी अवसरों पर विशेष ध्यान दिया जाए।
9. डिजिटल शिक्षा और डिजिटल वित्तीय सेवाओं तक समान पहुँच सुनिश्चित करने का प्रयास किया जाए।
10. जाति-आधारित भेदभाव की शिकायतों के लिए प्रभावी और सुलभ संस्थागत व्यवस्था मजबूत की जाए।
11. सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन की स्थानीय स्तर पर नियमित निगरानी की जाए।
12. सामाजिक सशक्तिकरण को केवल आर्थिक सहायता के बजाय शिक्षा, सामाजिक सम्मान, अधिकार-जागरूकता और निर्णय क्षमता के संयुक्त परिणाम के रूप में देखा जाए।

13. निष्कर्ष

“जातिवाद के संदर्भ में सशक्तिकरण” भारतीय समाज में सामाजिक न्याय और समान अवसर के प्रश्न को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण शोध-विषय है। जाति-आधारित असमानता का प्रभाव केवल सामाजिक संबंधों तक सीमित नहीं है; यह शिक्षा, रोजगार, आय, संपत्ति, राजनीतिक भागीदारी और सामाजिक प्रतिष्ठा जैसे क्षेत्रों से भी जुड़ सकता है। आधुनिक भारत में संवैधानिक प्रावधानों, कानूनों, आरक्षण व्यवस्था और विकास कार्यक्रमों ने सामाजिक रूप से वंचित समूहों के लिए अवसरों का विस्तार करने में महत्वपूर्ण संस्थागत आधार बनाया है। अस्पृश्यता के विरुद्ध Protection of Civil Rights Act, 1955 तथा अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के विरुद्ध अत्याचारों की रोकथाम के लिए 1989 का कानून इसी व्यापक कानूनी ढाँचे का हिस्सा हैं। फिर भी सशक्तिकरण की प्रक्रिया को समझने के लिए यह देखना आवश्यक है कि औपचारिक अधिकार वास्तविक सामाजिक जीवन में किस प्रकार अनुभव किए जाते हैं। शिक्षा, आर्थिक स्वतंत्रता, सामाजिक सम्मान, राजनीतिक भागीदारी और कानूनी जागरूकता एक-दूसरे से जुड़े हुए आयाम हैं। इसलिए जाति-संबंधी असमानता का समाधान भी बहुआयामी दृष्टिकोण की माँग करता है यह अध्ययन इस बात पर विशेष ध्यान देगा कि व्यक्ति और समुदाय केवल कल्याणकारी योजनाओं के लाभार्थी न रहकर अपने अधिकारों, संसाधनों और निर्णय-निर्माण की प्रक्रियाओं में सक्रिय भागीदार किस प्रकार बनते हैं। इस दृष्टि से सशक्तिकरण को सामाजिक परिवर्तन की एक निरंतर प्रक्रिया के रूप में समझा जा सकता है।

संदर्भ-सूची / Bibliography

- (i) Ambedkar, B. R. (1936). *Annihilation of Caste*. Privately published.
- (ii) Ambedkar, B. R. (1946). *Who Were the Shudras?* Thacker and Company.
- (iii) Béteille, A. (1965). *Caste, Class and Power: Changing Patterns of Stratification in a Tanjore Village*. University of California Press.
- (iv) Béteille, A. (1983). *The Idea of Natural Inequality and Other Essays*. Oxford University Press.
- (v) Ghurye, G. S. (1969). *Caste and Race in India*. Popular Prakashan.
- (vi) Srinivas, M. N. (1966). *Social Change in Modern India*. University of California Press.
- (vii) Omvedt, G. (1994). *Dalits and the Democratic Revolution: Dr. Ambedkar and the Dalit Movement in Colonial India*. Sage Publications.
- (viii) Thorat, S., & Newman, K. S. (Eds.). (2010). *Blocked by Caste: Economic Discrimination in Modern India*. Oxford University Press.

- (ix) Zelliott, E. (1992). *From Untouchable to Dalit: Essays on the Ambedkar Movement*. Manohar.
- (x) रिपोर्ट में अनुसूचित जातियों सहित कमजोर वर्गों के लिए शिक्षा, रोजगार, ग्रामीण विकास और आर्थिक अवसरों पर चर्चा की गई है। ([NITI Repository](#))
- (xi) Planning Commission, Government of India. (1961). *Report of the Seminar on Employment of Scheduled Castes and Scheduled Tribes*. निति आयोग Digital Library. ([NITI Repository](#))
- (xii) निति आयोग *Social Inclusion, Law, Order and Justice Delivery*. सामाजिक सशक्तिकरण, आर्थिक सशक्तिकरण तथा सामाजिक एवं वित्तीय समावेशन के विभिन्न आयामों पर आधिकारिक चर्चा। (निति आयोग)

Disclaimer/Publisher's Note: The views, findings, and opinions expressed in this publication are solely those of the author(s). The publisher and editorial team are not responsible for any errors, claims, or consequences arising from the use of the published content.